पुस्तक के पन्नों से

11

बहुरूप गांधी

लेखक – *अनु बंद्योपाध्याय*
प्रकाशक – राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
पृष्ठ – 169 – **मूल्य** – ₹ 40

गांधी जी को लेकर कितने ही किस्से-कहानियाँ बन चुकी हैं। उन्हें जिन्होंने देखा नहीं है, खासतौर से आजकल के बच्चों ने, वे ज़रूर सोचते होंगे कि वह कोई बहुत ही अनोखे व्यक्ति या अलौकिक पुरुष थे जिन्होंने बड़े-बड़े काम किए। इसलिए उन लोगों के सामने उनके जीवन की मामूली झाँकियाँ रखना ज़रूरी है। इस किताब 'बहुरूप गांधी' में यही किया गया है। इस पुस्तक की प्रस्तावना में पं. जवाहरलाल नेहरु लिखते हैं- यह पुस्तक बच्चों के लिए है। लेकिन मुझे यकीन है कि बहुत-से बड़े लोग भी इसे खुशी से पढ़ेंगे और लाभ उठाएँगे। मुझे खुशी है कि ऐसी पुस्तक लिखी गई जिसमें हमें बताया गया है कि गांधी राजनीति और सार्वजनिक जीवन के अलावा और किस-किस तरह के काम किया करते थे। इससे शायद उनको हम अच्छी तरह समझ सकेंगे। बहुरूप गांधी पुस्तक परिषद् द्वारा प्रकाशित है। इसे अनु बंद्योपाध्याय ने लिखा है। इसमें गांधी जी के बहुआयामी व्यक्तित्व की झलक है। यहाँ पर इसी किताब से कुछ पन्ने दिए जा रहे हैं-

'दाई'

एक बार देश के कई प्रसिद्ध नेता गांधी से ज़रूरी बात करने सेवाग्राम पहुँचे। उन्होंने देखा कि गांधी बुखार में पड़े दो रोगियों के माथे पर पानी की पट्टी रखने तथा कटिस्नान कराने में लगे हुए थे। थोड़ी देर बाद एक नेता ने चिढ़कर कहा कि यदि आपको समय न हो तो हम लोग जाएँ। गांधी ने शांतभाव से कहा, "ये लोग बड़े कष्ट में हैं, इनको सेवा की बहुत ज़रूरत है।" इस पर दूसरे सज्जन ने कहा कि, 'ये सब काम क्या आपको खुद ही करने चाहिए?' गांधी ने उत्तर दिया, "और कौन करेगा भला? आप गाँव में जाएँ तो देखेंगे कि हर घर में कोई-न-कोई व्यक्ति बुखार से पीड़ित है।"

बचपन से ही गांधी के मन में सेवा करने का बड़ा शौक था। पाठशाला बंद होते ही वह खेल-कूद में न लगकर जल्दी-से-जल्दी घर लौट आते और रूग्ण पिता की सेवा में लग जाते थे। आयुर्वेदिक औषधि बनाकर उन्हें पिलाते, उनके ज़ख्म धोते और काफी रात तक जागकर उनके पैर दबाते। उम्र के साथ-साथ गांधी का सेवा करने का शौक भी बढ़ता गया। दक्षिण अफ्रीका में एक चिकित्सालय में जाकर वह प्रतिदिन दो घंटे रोगियों की सुश्रुषा करते थे। वहाँ उन्होंने नुस्खे के अनुसार दवा बनाना सीखा और इससे उन्हें किस रोग में कौन-सी दवा दी जाती है, इसका भी ज्ञान हुआ। वहाँ बहुत से दुखी भारतीय इलाज के लिए आते थे। इस काम के लिए समय निकालने के लिए गांधी को अपना कुछ वकालती काम अपने एक साथी मुसलमान वकील को सौंप देना पड़ा।

दक्षिण अफ्रीका में तीन साल रहकर सन् 1896 में गांधी थोड़े अरसे के लिए अपने परिवार को लेने भारत आए। उस समय गांधी के पास बहुत काम था। वह दक्षिण अफ्रीकावासी भारतीयों की दुर्दशा बताने के लिए देश के प्रसिद्ध नेताओं और पत्रकारों से मिल रहे थे। इस विषय पर उन्होंने एक 'हरी पुस्तिका' प्रकाशित की थी और उसे बाँटने में व्यस्त थे। लेकिन जैसे ही उन्हें मालूम हुआ कि उनके बहनोई बहुत बीमार हैं और उनकी बहन के पास इतने पैसे नहीं कि वह कोई दाई या आया रख सके, वे मरीज को अपने घर पर ले आए। बहनोई को उन्होंने अपने कमरे में रखा और दिन-रात उनकी सेवा की।

सौ कामों में बँधे रहने पर भी वह प्रतिदिन आश्रम के रोगियों की खोज-खबर लेना नहीं भूलते थे। सभी रोगियों का पथ्य उनके कहे अनुसार तैयार किया जाता था और कभी-कभी तो उन्हें दिखाकर ही रोगियों को वह पथ्य दिया जाता था। गांधी से मिलने वालों की बैठक जब समाप्त हो जाती तो उनकी कुटिया कभी-कभी रोगियों की भोजनशाला बन जाती थी। चलने-फिरने में समर्थ सभी रोगी उनकी कुटिया में इकट्ठे होकर उन्हीं के सामने खाते थे। किसी रोग की छूत लग जाने का भय गांधी को नहीं था। एक बार एक कोढ़ी भिखारी उनके पास आया। उन्होंने उसे अपने ही घर में आश्रय दिया और कई दिनों तक उसके घाव धोकर मरहम-पट्टी की।

दक्षिण अफ्रीका में बोअर युद्ध और जुलू विद्रोह के समय गांधी को बड़े पैमाने पर पीड़ितों की सेवा करने का विशेष अवसर मिला था। दोनों अवसरों पर उन्होंने भारतीय स्वयंसेवक दल बनाकर युद्ध में घायलों की बड़ी सेवा की। गांधी इस दल के नायक थे और स्वयंसेवकों के साथ खुद वह पीड़ितों को डोली में डालकर मीलों दूर पहुँचाते थे। वे गोरे सैनिकों के लिए डॉक्टरी नुस्खों के अनुसार दवाई तैयार करते थे। लोगों की सेवा का मौका पाकर उन्हें बहुत संतोष हुआ था। गोरे शासक लोग जुलू लोगों से अधिक कर वसूल करना चाहते थे। जुलू विद्रोहियों पर खूब जुल्म किया गया और बहुतों को कोड़ों की मार से अधमरा कर दिया था। गोरी नर्सें तो उन्हें छूना भी पाप समझती थीं। सेवा-सुश्रुषा और दवा के अभाव

में उनके घाव पक कर सड़ने लगे। गाँधी ने अपने दल के लोगों की सहायता से जुलू विद्रोहियों की मरहम-पट्टी तथा परिचर्या की। गांधी की सेवा की तारीफ करते हुए सरकार ने उन्हें 'जुलू-यद्ध पदक' और 'केसर हिंद स्वर्ण पदक' दिए थे।

एक बार दक्षिण अफ्रीका में अचानक प्लेग की महामारी फूट पड़ी। वहाँ की सोने की खानों में बहुत-से भारतीय मज़दूर काम करते थे। उनकी बस्ती बहुत घनी और गंदी थी। यह महामारी वहाँ भी फैल गई है, यह सुनते ही गांधी फौरन अपने चार साथियों को लेकर वहाँ जा पहुँचे। आसपास कोई अस्पताल न होने के कारण उन्होंने एक गोदाम का दरवाज़ा तोड़ डाला और उसे साफ़ कर एक काम-चलाऊ अस्पताल बना लिया। नगरपालिका के अधिकारियों ने उन्हें कुछ दवाएँ और कीटाणुनाशक घोल दिया और एक नर्स को वहाँ भेज दिया। नर्स प्लेग से बचने के लिए ब्रांडी का सेवन करती थी, लेकिन गांधी की इसमें तनिक भी आस्था नहीं थी। अस्पताल में तेईस रोगी भर्ती हुए थे। गांधी रोगियों को दवा देते, उनका बिस्तर साफ करते और रात में उनके पास बैठ कर उनसे बातचीत करते और हिम्मत बँधाते। डॉक्टर की अनुमति लेकर गांधी खुद भी खूब सावधान रहते थे और परिश्रम के समय भरपेट खाना नहीं खाते थे। दूसरों की सेवा करने के साथ-साथ अपने शरीर का ध्यान रखना वह दाई का कर्तव्य मानते थे।

गांधी एनीमा देने, कटिस्नान कराने, शरीर पोंछने, तेल-मालिश करने, मिट्टी की पट्टी देने और भीगी चादर लपेटने में बहुत कुशल थे। अपने रक्तचाप को कम करने के लिए वह अपने माथे पर प्रायः मिट्टी की पट्टी रखा करते थे और उसी अवस्था में सम्माननीय अतिथियों से बातचीत करते रहते थे। उन्होंने जापानी कवि नोगुची से कहा था, "भारत की मिट्टी से मैं जन्मा हूँ, इसलिए भारत की मिट्टी को मैं मुकुट के रूप में अपने सिर पर धारण करता हूँ।"

रोगी की हालत बिगड़ने पर गांधी घबराते नहीं थे, बल्कि धीरज से उपचार करते थे। वह अपने प्रियजनों और स्त्री-पुत्रादि की चिकित्सा-परिचर्या भी बिना घबराए करते थे। एक बार उनके आठ साल के पुत्र के हाथ की हड्डी टूट गई। गांधी ने एक डॉक्टर द्वारा बाँधी गई पट्टी को खोलकर बच्चे के हाथ के जख्म को साफ किया और मिट्टी की पट्टी बाँधते रहे जिससे हाथ ठीक हो गया। एक बार उनके दस साल के लड़के को टाइफाइड हो गया। चालीस दिन तक उन्होंने यत्न से उसकी परिचर्या की थी। गांधी उसके रोने-चिल्लाने पर ध्यान न देते और उसके शरीर पर गीली चादर लपेट कर उसे कंबल से ढकते थे। इस प्रकार उन्होंने उसे धीरे-धीरे ठीक कर लिया। वह रोगी की बहुत प्रेम से सेवा करते थे, किंतु इलाज या सुश्रूषा में किसी प्रकार की ढिलाई नहीं आने देते थे। टाइफाइड के एक अन्य रोगी बच्चे की उन्होंने मिट्टी और जल से चिकित्सा की थी। डेढ़-डेढ़ घंटे बाद वह उसके पेडू पर एक इंच मोटी मिट्टी की पट्टी रखते थे। बुखार उतर जाने पर उन्होंने बच्चे को खूब पके हुए केले पर रखा। उन केलों का वे स्वयं अच्छी तरह भुर्ता बनाते

थे। उसे ज़्यादा न खिला दे इस डर से उन्होंने यह काम उसकी माँ को भी नहीं सौंपा था। गांधी जानते थे कि रोगी की मानसिक शांति या प्रसन्नता का उसके स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसलिए वह बातों से रोगी को बहलाए रखते थे। गांधी इतने जतन से तीमारदारी करते थे कि रोगी उन्हें देखकर प्रसन्न हो उठते थे। यों तो गांधी किसी भी नशे को अच्छा नहीं समझते थे किंतु एक बार आश्रम के एक मद्रासी बच्चे को पेचिस हो गया और उसकी कॉफी पीने की इच्छा हुई। जैसे ही गांधी को इसका पता चला तो उसकी तबीयत ज़रा सँभलते ही उन्होंने अपने हाथ से कॉफी बनाई और प्याले में भर कर खुद उसे दी।

दक्षिण अफ्रीका में कस्तूरबा को दो बार कड़ी बीमारी झेलनी पड़ी थी। डॉक्टरों ने उनके बचने की आशा छोड़ दी थी। किंतु गांधी ने धीरज, सतर्कता और हिम्मत से उनकी परिचर्या करके उन्हें चँगा कर दिया। पहली बार जेल से छूटने पर बा बहुत दुर्बल हो गई थीं। गांधी कस्तूरबा के दाँत साफ करते, कॉफी बनाकर पिलाते, एनीमा देते और उनके पाखाने के बर्तन को साफ किया करते थे। एक बार उन्होंने कस्तूरबा के बाल काढ़ने की कोशिश भी की थी। सवेरा होते ही उन्हें बाँहों का सहारा देकर कमरे के बाहर खुली जगह में एक पेड़ की छाया में सुला देते और सारे दिन छाया के साथ-साथ उनका बिछौना भी सरकाते रहते थे।

दक्षिण अफ्रीका में कुशल हिंदुस्तानी धाएँ नहीं थीं और गोरी दाइयाँ काली औरतों का बच्चा जनाने से इंकार कर सकती थीं। इसलिए जब कस्तूरबा गर्भवती थीं तब गांधी ने प्रसूति का काम सीखा और स्वयं अपनी पत्नी की प्रसूति कराई।

आगा खाँ महल में कस्तूरबा की अंतिम बीमारी के समय भी बहुत सेवा-सुश्रूषा की और उनको कटिस्नान दिया। उस समय गांधी पचहत्तर वर्ष के थे।

'नई रिवाज़ वाले'

गांधी सादगी-पसंद और फैशन से कोसों दूर रहने वाले आदमी थे, लेकिन रहन-सहन और पहनावे से नई रिवाज़ चालू करने में कुशल थे। दक्षिण अफ्रीका में गांधी ने पतलून के साथ सैंडिल पहननी शुरू की। उस समय के लिए यह एक अजीब और नई बात थी। गांधी जूतों की बजाय सैंडिल को इसलिए ज़्यादा पसंद करते थे कि उनसे गर्मियों में पैरों में ठंडक रहती थी और सर्दी में उन्हें मोज़ों पर भी पहना जा सकता था। सैंडिल वह स्वयं बना लेते थे। दक्षिण अफ्रीका के प्रधानमंत्री जनरल स्मट्स को जब पता चला कि हाथ की बनी सैंडिल मज़बूत होने के साथ-साथ आरामदेह भी होती हैं, तब उन्होंने भी एक जोड़ी सैंडिल पहनने की इच्छा प्रकट की। लिहाज़ा गांधी ने एक जोड़ी सैंडिल बनाकर जनरल स्मट्स को भेंट कीं।

गांधी ने खाने-पीने और पहनने में अनेक नए ढंग शुरू किए, इनमें से कुछ को लोगों ने अपनाया और इससे नए रिवाज़ चल पड़े।

गांधी जब पहली बार कांग्रेस के अधिवेशन में शामिल हुए तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि भिन्न-भिन्न जाति के लोगों के लिए

अलग रसोईघर ही नहीं थे, बल्कि अलग-अलग रुचि के लिए भी अलग-अलग खाना पकता था। गांधी छोटी-छोटी चीज़ों को भी महत्त्व देते थे। इसलिए उन्हें लगा कि जब तक लोग अपनी-अपनी खिचड़ी अलग पकाना छोड़कर, साथ-साथ खाएँ-पीएँ, उठें-बैठेंगे नहीं, तब तक स्वराज्य नहीं आ सकता। वह लोगों को भोजन की आदतों को सरल बनाकर अलग-अलग खाना बनाने में पैसा मेहनत और समय की बर्बादी को रोकना चाहते थे। उन्होंने भोजन के बारे में अनेक प्रयोग किए। उनके आश्रमों में सभी के लिए बिना मसाले का सादा निरामिष भोजन एक ही रसोई में बनता था। इस निरामिष भोजन को मुसलमान, हिंदू, ईसाई सब एक ही स्थान पर साथ-साथ बैठकर खाते थे।

गांधी कहते थे कि कच्चे सलाद, फल, उबली सब्ज़ी, हाथ-कूटे चावल और हाथ के पिसे आटे में बहुत पुस्टई होती है। उन्होंने लोगों को समझाया कि ताज़े गुड़ या शहद में सफेद चीनी से ज़्यादा विटामिन होते हैं। उन्होंने लोगों को यह सिखाने की कोशिश की कि मिर्च, मसाले, रूप, रंग और गंध की बजाय खाने के तत्त्वों पर ज़्यादा ध्यान देना चाहिए।

फैजपुर कांग्रेस अधिवेशन में पहली बार प्रतिनिधियों को हाथ-कुटा चावल और चोकर वाले की रोटियाँ परोसी गईं। यह गांधी की ही कल्पना थी कि कांग्रेस का अधिवेशन गाँव में होना चाहिए। पहले कांग्रेस के इजलास में केवल पढ़े-लिखे और ऊँचे लोग ही शामिल होते थे। कांग्रेस के अधिवेशन कलकत्ता, बंबई और मद्रास जैसे बड़े नगरों में हुआ करते थे। गांधी ने कांग्रेस को जनता की संस्था बना दिया और उसमें आम लोग भी शामिल होने लगे। विदेशी-ढंग के कोट-पतलून पहन अँग्रेज़ी में भाषण झाड़ने की बजाय सीधी-सादी भारतीय वेश-भूषा में गांधी श्रोताओं के सामने सरल हिंदी में भाषण करते थे।

हमारी सीधी-सादी किंतु सुंदर राष्ट्रीय वेश-भूषा चालू करने का श्रेय भी गांधी को है। दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रहियों के जिस ऐतिहासिक कूच का उन्होंने नेतृत्व किया था। उसमें सैकड़ों खान और गिरमिटिया मज़दूर थे। इनमें से ज़्यादातर लोग दक्षिण भारत के थे। इन सत्याग्रहियों को तरह-तरह की कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं। बहुत से जोग जेलों में डाल दिए गए और कुछ मर भी गए। उनसे सहानुभूति और अपनापन सुनिश्चित करने के लिए गांधी ने उनकी पोशाक, कुर्ता और लुंगी पहनने का निश्चय किया। छड़ी की जगह उन्होंने हाथ में लंबी लाठी ली और कंधे पर एक झोला।

मकान की भीतरी सजावट के बारे में उनके विचार अनोखे थे। कमरे में कालीन, गलीचे, ढेर सारे असबाब और कला-वस्तुओं की भीड़-भाड़ उन्हें पसंद नहीं थी। खिड़कियों पर पर्दे लगााने का उनको कोई शौक नहीं था। एक बार वह दक्षिण भारत के एक धनी व्यापारी के घर ठहरे। उन्हें उनके घर में कला वस्तुओं का बेढंगा और भोंडा संग्रह बहुत नापसंद आया। उन्होंने कहा, "बहुत ज़्यादा असबाब के बीच मेरा दम घुटने लगता है। आपने जो चित्र लगाए हैं उनमें से कुछ बड़े भद्दे हैं। अगर आप मुझे चेट्टिनाड के सभी

मकानों की भीतरी सजावट करने का ठेका दें, तो मैं इससे अच्छी सजावट इसके दशांस खर्च में कर दूँगा तथा आपको ज़्यादा आराम और ताज़ी हवा भी मिलेगी। साथ ही भारत के अच्छे-से-अच्छे कलाकारों से मैं यह प्रमाणपत्र भी ले लूँगा कि मैंने आपके मकान बहुत कलात्मक ढंग से सजाए हैं।" सेवाग्राम में गांधी की कुटिया की नंदलाल बोस ने जो सराहना की थी, उससे गांधी का यह दावा उचित सिद्ध होता है। बोस महोदय ने लिखा था- "कुटिया का फर्श और दीवारें गोबर से लिपी हुई थीं। कमरे में एक भी चित्र, फोटो, गुड़िया, या मूर्ति नहीं थी। एक कोने में बैठने के लिए एक चटाई थी जिस पर खादी की साफ चादर बिछी थी और एक गद्दी रखी थी। खादी से ढँका हुआ एक लकड़ी का बक्सा लिखने की मेज का काम देता था और इसके एक तरफ काँसे का एक छोटा-सा चमकदार लोटा रखा था जिस पर पीपल के पत्ते की आकृति का एक लोहे का ढक्कन था। कमरे में स्वच्छता और सादगी छाई हुई थी। गांधी केवल खादी की कोपीन पहने बैठने थे। एक मधुर मुस्कान उनके मुख पर खेल रही थी। इस्परत की पानीदार नंगी तलवार की भाँति चमचमाती उनकी वह मूर्ति मुझे नज़र आई।"

'रसोइया'

महादेव देसाई ने एक बार गांधी से पूछा, "बापूजी, फीनिक्स आश्रम स्थापित करने से पहले क्या आपके पास कोई रसोइया था?" गांधी जी ने जवाब दिया, "नहीं, मैंने बहुत पहले ही उसे छुड़ा दिया था। हमारे पास एक अच्छा रसोइया था, लेकिन उसने कहा कि मैं बिना मिर्च-मसाले के भोजन नहीं पका सकता। मैंने उसे तुरंत छुट्टी दे दी और फिर दुबारा कभी रसोइया नहीं रखा।" यह उस समय की बात है जब गांधी पैंतीस वर्ष के थे।

गांधी ने अठारह वर्ष की उम्र में पहली बार अपना भोजन बनाने की कोशिश की, तब वह इंग्लैंड में पढ़ते थे। वह कट्टर शाकाहारी थे। वहाँ उन्हें सामान्यतः डबलरोटी, मक्खन और मुरब्बा तथा बिना तली हुई उबली सब्ज़ियाँ मिलती थीं। गांधी अपनी माँ के हाथ का बना स्वादिष्ट भोजन खाने के आदी थे, इसलिए उन्हें ऐसा खाना बिल्कुल फीका-फीका लगता था।

शाकाहारी होटलों में कुछ महीने भोजन करने के बाद गांधी ने मितव्ययिता से रहने का निश्चय किया। उन्होंने एक कमरा किराए पर ले लिया और वहाँ स्टोव्ह पर अपना नाश्ता और रात का भोजन स्वयं बनाने लगे। खाना पकाने में उन्हें मुश्किल से बीस मिनट लगते थे और उस पर सिर्फ बारह आने खर्चा बैठता था।

बैरिस्टरी पास करके भारत लौटने पर गांधी ने बंबई में एक छोटा-सा मकान किराए पर लिया और एक ब्राह्मण रसोइया रखा। गांधी आधा खाना खुद ही पकाते थे, और उन्होंने रसोइए को कुछ विलायती शाकाहारी भोजन बनाना भी सिखाया। गांधी को घर में सफ़ाई व तरतीब का कुछ ज़्यादा ही ध्यान रहता था, खासतौर पर रसोईघर की सफाई का, और उन्होंने अपने रसोइए को साफ रहने, अपने कपड़े धोने और नियमित रूप से नहाने की शिक्षा दी।

दक्षिण अफ्रीका या भारत में गांधी के आश्रम में रसोइए नौकर नहीं रखे जाते थे। गांधी मानते थे कि भोजन के लिए कई प्रकार की चीज़ें पकाना समय और शक्ति की बर्बादी है। वह अपने आश्रम के सदस्यों को मनपसंद खाना देने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने सबके लिए एक सीधी-सादी भोजन की सूची बना दी थी। सभी का भोजन एक ही रसोई में पकता था।

उन्होंने पाक-कला, जो कि एक अत्यंत जटिल और कठिन कला को भी बिल्कुल सरल बना दिया था। उनके आश्रम में भोजन बिना माँड निकाला चावल, रोटी, कच्चा सलाद, उबली और बिना मसाले की सब्ज़ियाँ, फल और दूध, शहद और दही दिया जाता था। मिठाई की जगह ताज़ा गुड़ और शहद दिया जाता था।

जस्ट की पुस्तक 'रिटर्न टु नेचर' पढ़ने के बाद गांधी की यह धारणा बन गई कि मनुष्य को सिर्फ स्वाद के लिए नहीं बल्कि शरीर को स्वस्थ और पुष्ट रखने के लिए भोजन करना चाहिए। गांधी ने आहार-संबंधी नए-नए प्रयोग किए और यह शौक उनका जीवन भर बना रहा। कभी वे बिना पकाया भोजन करते तो कभी किसी और प्रकार का। कुछ प्रयोगों के कारण तो उन्हें तकलीफ भी उठानी पड़ी। पाँच वर्ष तक वे लगातार फलाहार पर रहे, एक बार उन्होंने चार माह तक अंकुरित अनाज और कच्ची चीज़ें खाईं, जिससे उन्हें पेचिस हो गई।

दक्षिण अफ्रीका में फीनिक्स आश्रम में गांधी आश्रम-पाठशाला के प्रधानाध्यापक और आश्रम के मुख्य रसोइया भी थे। वहाँ के प्रवासी भारतीयों ने एक बार यूरोपीय को भोज दिया। इस अवसर पर गांधी ने भोजन तैयार करने और परोसने में हाथ बँटाया।

फीनिक्स आश्रम से सत्याग्रहियों का पहला जत्था जब सत्याग्रह करने को तैयार हुआ तब गांधी ने उनको अपने हाथों से भोजन बनाकर खिलाया। उन्होंने ढेर-सी रोटियाँ, टमाटर की चटनी, चावल और कढ़ी और खजूर की खीर भी बनाई। एक ओर वह अपने हाथों से खाना बनाते जाते थे और जेल-जीवन के बारे में बताते जाते थे। जब सत्याग्रहियों की संख्या बढ़कर दो हज़ार पहुँच गई तब गांधी सत्याग्रहियों का जत्था लेकर स्वयं सत्याग्रह के लिए निकले। इन सत्याग्रहियों के लिए राह में खाना बनाने का काम भी वही करते थे। एक दिन दाल पतली हो गई, दूसरे दिन चावल अधपके रह गए। लेकिन उनके साथियों के मन में अपने गांधी भाई के लिए इतना प्रेम और आदर था कि जैसा भी मिला, वैसा खाना बिना शिकायत किए खा गए। दक्षिण अफ्रीका की जेल में भी गांधी भोजन बनाने में अपने साथियों की मदद किया करते थे।

गांधी पाक-कला को शिक्षा का अत्यावश्यक अंग मानते थे और इस बात को गर्व से कहा करते थे कि टालस्टॉय बाड़ी पर लगभग सभी लड़के भोजन बनाना जानते थे। दक्षिण अफ्रीका से लौटने के कुछ समय बाद ही जब वह शांति-निकेतन गए तो वहाँ के छात्रों ने उनके भोजन बनाने के विचार को खूब पसंद किया। रवींद्रनाथ ठाकुर को संदेह तो था कि क्या यह

योजना चल सकेगी? पर उन्होंने सफलता के लिए अपना आशीर्वाद दिया।

मद्रास में एक छात्रावास में गांधी को यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि वहाँ न केवल विभिन्न जातियों और वर्गों के लड़कों के लिए अलग-अलग रसोईघर थे, बल्कि भिन्न-भिन्न रुचि को संतुष्ट करने के लिए तरह-तरह के व्यंजन बनाए जाते थे। एक बार बंगाली सज्जन के यहाँ, उनके सामने भाँति-भाँति के व्यंजन परोसे गए। इससे उन्हें बड़ी व्यथा हुई। उन्होंने निश्चय किया के आगे से मैं प्रतिदिन भोजन में पाँच चीज़ों से अधिक नहीं दूँगा। बिहार में उन्होंने युगों से चली आ रही छूआछूत की बुराई को भी खत्म किया और चम्पारन में नील की खेती की जाँच में अपनी मदद करने वाले सभी वकीलों को उन्होंने एक ही रसोई में बना भोजन करने के लिए राजी कर लिया।

गांधी की आहार सूची में कुछ बड़ी विचित्र चीज़ें होती थीं। नीम के पत्तों से बनी कुनैन जैसी कड़वी चटनी, आश्रम के बगल में लगी तेल की धानी से निकली पौष्टिक खली और दही का मिश्रण, उबले हुए सोयाबीन का भुर्ता, किसी भी हरे और ताज़े साग का सलाद, रोटी को कूट कर उससे बनाई गई खीर, मोटे पिसे हुए गेहूँ का दलिया, और भुने हुए गेहूँ, चूरे से तैयार की गई कॉफी, गांधी के आश्रम में परोसे जाने वाली विचित्र चीज़ें थीं।

गांधी चावल, दाल, रसेदार सब्ज़ी, सलाद, संतरे और संतरे के छिलके का मुरब्बा, केक, बिना खमीरा या बेकिंग पाउडर की डबल रोटी, अच्छी चपाती और खाखरा बना सकते थे। सेवाग्राम में एक विशेष प्रकार का चूल्हा प्रयोग किया जाता था जिसमें बहुत कम खर्च से सैकड़ों आदमियों के लिए चावल और रोटियाँ तैयार हो सकती थीं और सब्ज़ी उबाली जा सकती थी।

एक बार उनके एक साथी ने कहा, "अभी हाल में खबर थी कि घास में बहुत विटामिन होते हैं। जिस समय यह खोज हुई उस समय गांधी आश्रम में नहीं थे, वरना निश्चय ही यह रसोई बंद करा देते और हमसे कहते कि आप लोग आश्रम के बगीचे की घास खाएँ।"

❑❑❑